मज़मून: नौजवानों की असली मंज़िल - ज़िंदगी का फ़लसफ़ा, मेहनत और एक अकेला इंसान

लेखक : डॉ सैय्यद नासिर शाह

अक्सर गहरी खामोशी में जब मैं अकेले बैठता हूँ, तो मेरे ज़ेहन में एक फ़लसफ़ियाना (philosophical) सवाल उभरता है। दुनिया इतनी बड़ी है, इसमें इतनी भीड़ है, इतने सारे लोग हैं– तो क्या मेरे एक अकेले के कुछ करने से आख़िर कोई फ़र्क पड़ेगा? क्या एक अकेला इंसान, अपनी मेहनत और अपनी सोच से इस पूरी सोसाइटी को बदल सकता है? जब मैं इस पर गौर करता हूँ, तो मेरा अंतर्मन, मेरी रूह मुझे जवाब देती है–हाँ, बिल्कुल बदल सकता है। मैंने महसूस किया है कि दुनिया के हर बड़े बदलाव की शुरुआत किसी भीड़ ने नहीं, बल्कि किसी एक अकेले इंसान की सोच और उसकी खामोश मेहनत ने की है। मैं आज अपने इस मज़मून में उसी ज़िंदगी के फ़लसफ़े को तफ़सील से बयान कर रहा हूँ कि कैसे एक युवा ख़ुद को तराश कर पूरे समाज के सामने एक मिसाल बन सकता है।

तालीम: सोच का निर्माण और खुदी की पहचान

मैं सोचता हूँ कि तालीम (education) आख़िर है क्या? मेरे नज़रिए में, यह सिर्फ़ किताबों के पन्नों और डिग्री के कागज़ तक सीमित नहीं है। ज़िंदगी का असल फ़लसफ़ा यह है कि तालीम इंसान को उसकी 'खुदी' (Self) से मिलवाती है। जब एक नौजवान सच्ची लगन से पढ़ता है, तो वह सिर्फ़ डिग्री हासिल नहीं करता, वह दरअसल अपने अंदर के अंधेरे को ख़त्म करता है। अगर एक अकेले इंसान ने अपनी तालीम से ख़ुद को रोशन कर लिया, तो वह जहाँ भी जाएगा, वहाँ उजाला ही करेगा। एक अकेला जलते हुए चिराग़ में इतनी ताक़त होती है कि वह हज़ारों बुझे हुए चिराग़ों को रोशन कर सके। जब एक युवा अपना वक़्त पढ़ाई और नए हुनर सीखने में लगाता है, तो वह दरअसल उस पहले चिराग़ को जलाने की मेहनत कर रहा होता है, जिसकी रोशनी आगे चल कर पूरी सोसाइटी को राह दिखाएगी।

सियासत का फ़रेब और खामोशी की ताक़त

सियासत (Politics) को अगर मैं ज़िंदगी के फ़लसफ़े की नज़र से देखूँ, तो यह मुझे एक ऐसे शोर की तरह लगती है जिसमें इंसान की अपनी आवाज़ और उसकी असलियत खो जाती है। अक्सर हम नौजवान सोचते हैं कि सिस्टम बदलने के लिए हमें नेता बनना पड़ेगा, भीड़ इकट्ठी करनी पड़ेगी। पर मेरा मानना है कि भीड़ इंसान से उसकी असली पहचान छीन लेती है। भीड़ का हिस्सा बन कर आप वही करते हैं जो भीड़ आपसे करवाना चाहती है। विद्यार्थी जीवन में राजनीति का शिकार होने का मतलब है अपने अंदर की शांति और अपने फ़ोकस को ख़त्म करना। जब एक अकेला इंसान खामोशी से सियासत की इस भीड़ और फ़िज़ूल की नारेबाज़ी से ख़ुद को अलग कर लेता है, तो शुरू में शायद लोग उस पर हँसते हैं। पर फ़लसफ़ा यह कहता है कि शोर मचाने वाली छोटी नदियाँ अक्सर सूख जाती हैं, लेकिन खामोश और गहरा बहने वाला समंदर हमेशा क़ायम रहता है। एक नौजवान जब दुश्मनी, झगड़ों और सियासत से दूर रह कर, चुपचाप अपने मक़सद पर काम करता है, तो उसकी वह खामोश मेहनत एक दिन इतनी ऊँची आवाज़ बनती है कि पूरा समाज उसे सुनने पर मजबूर हो जाता है।

मेहनत का फ़लसफ़ा: क़तरे से समंदर तक का सफ़र

मैंने ज़िंदगी को जिस नज़रिए से देखा है, वहाँ मेहनत सिर्फ़ पैसा कमाने या करियर बनाने का ज़रिया नहीं, बल्कि एक इबादत (worship) है। एक अकेला इंसान जब कड़ी मेहनत करता है, तो वह सिर्फ़ अपनी क़िस्मत नहीं बदलता, वह अपने आस-पास के लोगों और आने वाली नस्लों (generations) का रास्ता भी आसान कर देता है। आपने देखा होगा कि जब पानी का एक क़तरा (drop) लगातार एक ही जगह किसी पत्थर पर गिरता है, तो वह एक दिन उस ठोस पत्थर का सीना भी चीर देता है। यही कड़ी मेहनत का और एक अकेले इंसान का फ़लसफ़ा है। जब एक युवा आत्मनिर्भर (self-reliant) बनने की ठान लेता है, और रोज़ाना बिना थके, बिना किसी बहाने के अपना काम ईमानदारी से करता है, तो उसकी वह छोटी सी कोशिश सोसाइटी के लिए एक विशाल banyan tree (बरगद का पेड़) बन जाती है। एक अकेले इंसान की ईमानदारी और सफ़लता देख कर पड़ोस का दूसरा नौजवान प्रेरित होता है, उसको देख कर तीसरा। इस तरह मेहनत की

एक ज़ंजीर (chain) बनती है। एक अकेला इंसान अपनी लगन से पूरे समाज का माइंडसेट बदल कर रख देता है। वह सोसाइटी को सहारा माँगने वाला नहीं, बल्कि सहारा देने वाला बना देता है।

देश की तरक़्क़ी: एक अकेले नागरिक का मुकम्मल योगदान

'देशभक्ति' और सामाजिक योगदान का सबसे बड़ा फ़लसफ़ा क्या है? मुझे लगता है देश और सोसाइटी एक जिस्म (body) की तरह हैं, और हम हर एक नागरिक उस जिस्म का एक छोटा सा सेल (हिस्सा) हैं। अगर एक सेल सोच ले कि "मेरे अकेले ठीक रहने से या ईमानदार रहने से क्या फ़र्क पड़ेगा", और वह अपना काम करना बंद कर दे, तो धीरे-धीरे पूरा जिस्म बीमार होने लगता है। लेकिन अगर एक अकेला सेल पूरी ईमानदारी से अपना काम करता रहे, तो वह अपने आस-पास के हिस्से को भी सेहतमंद रखता है। देश की तरक़्क़ी सिर्फ़ तब नहीं होती जब नए क़ानून बनते हैं। देश की असल तरक़्क़ी तब होती है जब एक अकेला युवा सुबह उठता है, सड़क पर कचरा फेंकने से रुकता है, रिश्वत (bribe) लेने या देने से इंकार करता है, और अपने पेशे को पूरी ईमानदारी से अंजाम देता है। ये छोटी-छोटी, अकेले इंसान की कोशिशें ही तो हैं जो आगे चल कर एक महान और मज़बूत समाज का निर्माण करती हैं!

आख़िरी ख्यालात: खुदी को बुलंद करना

जब मैं अपने इन तमाम ख्यालात को समेटता हूँ, तो बस इस एक नतीजे पर पहुँचता हूँ: दुनिया और समाज को बदलने का ख़्वाब देखने से पहले, ख़ुद को बदलना और तराशना ज़रूरी है। हम नौजवानों को समझना होगा कि हमारी असल मंज़िल बाहर किसी भीड़ में नहीं, बल्कि हमारे अपने अंदर छुपी है। अगर हम सियासत और शोर से दूर रह कर, अपनी तालीम और कड़ी मेहनत पर विश्वास रखें, तो एक अकेला इंसान होने के बावजूद हम हिस्ट्री (इतिहास) बदल सकते हैं। एक मशहूर शायर का फ़लसफ़ा है कि जब इंसान अपनी 'खुदी' (Self) को बुलंद कर लेता है, तो ख़ुदा उससे ख़ुद पूछता है कि बता तेरी रज़ा क्या है। यही हमारी मंज़िल होनी चाहिए—ख़ुद को इतना क़ाबिल और मेहनतकश बनाना कि ये सोसाइटी, ये देश हम पर नाज़ कर सके। हर बड़ा इंक़िलाब (revolution) हमेशा एक अकेले इंसान के शांत ज़ेहन और उसके ठोस इरादों से ही

जन्म लेता है। मुझे पूरा विश्वास है कि हमारी अकेले की मेहनत कभी राईगां (बेकार) नहीं जाती।

“मंज़िलें क्या हैं, रास्ता क्या है?

हौसला हो तो फ़ासला क्या है!”